ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

घर के पिछवाड़े में मुर्गी पालन

डा. संजीव रंजन

विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा विज्ञान)
कृषि विज्ञान केंद्र, हरनौत (नालन्दा)

विगत तीन द शकों में मुर्गीपालन में बहुमुखी विकास हुआ है और मुर्गीपालन ने कुक्कुट उद्योग का रूप ले लिया है। अभी भी मुर्गीपालन के क्षेत्र में बहुत कुछ करना बाकी रह गया है क्योंकि हम भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद द्वारा निर्धारित प्रति व्यक्ति 180 अण्डे तथा 11कि0ग्रा0 मांस की उपलब्धता से काफी दूर हैं। वर्तमान प्रति व्यक्ति अण्डे की उपलब्धता मात्र 50 से 55 अण्डे है जबकि मांस की उपलब्धता 2.2 कि0ग्रा0 है। निर्धारित मानकों की पूर्ति के लिये अण्डे में लगभग 4 गुणा की वृद्धि वांछित है और मांस के लिये 5 गुणा वृद्धि की आवश्यकता होगी। लेकिन वृद्धि की यह दर अकेले कुक्कुट उद्योग से शायद सम्भव नहीं है क्योंकि कुक्कुट आहार में प्रयोग में लायी जाने वाली अधिकां श अवयव मनुष्य के खानें में काम आता है। जनसंख्या वृद्धि के साथ इन अवयवों की आपूर्ति कुक्कुट आहार के लिये होना शायद सम्भव नहीं होगा। यही कारण है कि हाल के कुछ वर्षों में कुक्कुट उत्पादन के तेजी से बढ़ते ग्राफ में ठहराव सा आता नजर आ रहा है। गरीब भारतीय ग्रामीणों को मांस और अंडे उपलब्ध कराने की समस्या सामने है। इस समस्या के निदान के लिये मुर्गी के छोटे-छोटे समूहों के लिये ऐसी उपयुक्त पद्धति का विकास करना होगा जिस में न्यूनतम खर्च पर अंडे और मांस का उत्पादन सम्भव हो सके। कम कीमत पर मांस और अंडे का उत्पादन का एकमात्र साधन परम्परागत घर के पिछवाड़े में देशी मुर्गीपालन पद्धति है। मुर्गी पालन की यह पद्धति सबसे सरल है जिसे छोटे और लघु कृषक, भूमिहीन मजदूर तथा महिलायें या बच्चे अपना सकते हैं। इस पद्धति में प्रायः 5 से 20 मुर्गियों का छोटा सा समूह एक परिवार के द्वारा पाला जाता है जो घर के पिछवाड़े तथा गली कूचों में अन्न के गिरे दाने, झाड़ फूसों के बीज, कीड़े मकोड़े, घास की कोमल पत्तिया तथा घर की जूठन इत्यादि खाकर अपना पेट भरता है। केवल प्रतिकूल वातावरण में निम्न कोटि का थोड़ा सा अनाज खिलाने की जरुरत पड़ती है। इसके रात्रि विश्राम तथा शिकारियों से बचाव के लिये घर के टूटे फूटे भाग काम में आते हैं या बांस की पुरानी टोकरी इत्यादि काम में लाये जाते हैं। इस प्रकार उनके रख-रखाव और खाने-पीने पर कोई खर्च नहीं करना पड़ता है।

देशी मुर्गी पालन मोटे तौर पर देखने में अस्तित्वहीन दिखाई पड़ता है लेकिन इसका पूर्ण विश्लेषण करनें पर इसके अनेकों लाभ नजर आते हैं -

(1) ग्रामीण क्षेत्रों में मुर्गी के अण्डे और मांस की उपलब्धता सुनिष्चित करने का यह एक सशक्त और आसान तरीका है।

(2) इसके लिये किसी वि शेष आवास या रख-रखाव की आवश्यकता नहीं होती है अतः भूमिहीन अशिक्षित किसान भी इसे अपना सकते हैं।

ISSN: 2583-0511 (Online), www.pashupalakmitra.in

(3) केवल एक बार शुरुआत में मुर्गे और मुर्गियों की खरीद में नाममात्र लागत की जरुरत पड़ती है और बाद का क्रम अपनें आप चलते रहता है।
(4) इस पद्धति से उत्पन्न अण्डे और मांस के उत्पादन में लागत नहीं के बराबर है।
(5) इस पद्धति से उत्पन्न अण्डे और मांस में विशेष प्रकार की सुगन्ध और स्वाद होता है जिसके कारण इसकी कीमत बाजार में फार्म के अण्डों और मांस की अपेक्षा काफी ज्यादा मिलती है।
(6) घर में अण्डे और मांस की उपलब्धता के कारण इसे खाकर लोग प्रोटीन कुपोषण से बचते हैं।
(7) अण्डे और मांस आमदनी के छोटे परन्तु नियमित स्रोत है।
(8) घर में उपलब्ध अण्डे और मांस मेहमानों की खातिरदारी में चार-चाँद लगाते हैं।
(9) मुर्गे उपहार स्वरूप भी दिये जाते हैं।
(10) इसकी पालन व्यवस्था मुख्यतः घर की महिलाओं के द्वारा घर के अन्य कार्यों के साथ-साथ की जाती है लेकिन घर के सभी सदस्य इसमें अपना योगदान देते हैं।

देशी मुर्गीपालन की वर्तमान स्थिति

इस पद्धति के मुर्गी पालन से इतना लाभ होते हुए भी पीछे के चार दशकों में इसमें काफी कमी आयी है। इसका मुख्य कारण आज का बदलता हुआ परिवेष है। जनसंख्या की दिन दूनी रात चैगुनी वृद्धि घर के पिछवाड़े और आंगन को सीमित करती जा रही है। गली-कूचों तथा आंगन का पक्कीकरण, कीटनाषक तथा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग तथा बहुफसलीय उत्पादन पद्धति से कीड़े-मकोड़े तथा फसलों के गिरे दानों की उपलब्धता दिनों दिन घटती जा रही है। घूमने-फिरने के लिये आवश्यक खाली स्थान तथा प्राकृतिक खाद्य स्रोतों में निरन्तर कमी के कारण परम्परागत ढंग से देशी मुर्गीपालन में अनेकों कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है। देशी मुर्गी वर्ष में **50** से **60** अण्डे देती है तथा **1500** ग्राम वजन प्राप्त करनें के लिये **20** से **25** सप्ताह का लम्बा समय लगता है। अतः आज के बदलते हुए परिवेश में कम उत्पादन क्षमता वाली देशी नस्ल की मुर्गी पालन आर्थिक दृष्टिकोण से लाभप्रद नहीं रह गया है।

उत्पादन क्षमता बढ़ाने के लिये आवश्यक सुधार

मुर्गीपालकों में तकनीकी ज्ञान का अभाव, ग्रामीण क्षेत्रों के लिये उपयुक्त उन्नत नस्ल की मुर्गियों की कमी, संतुलित सम्पूरक आहार का अभाव तथा मुर्गी महामारी जैसी मुख्य समस्यायें देशी मुर्गीपालन के मुख्य बाधक हैं। जिसका निराकरण कर देशी मुर्गी की उत्पादकता को **3** से **4** गुणा तक नाममात्र लागत से बढ़ाया जा सकता है।

तकनीकी ज्ञान

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि एक बार मुर्गी का जोड़ा खरीद लेने के बाद लोग दे शी मुर्गियों से सालों भर बच्चे निकलवाते रहते हैं जिससे मुर्गियों में कुड़क होने की आदत पड़ जाती है। मुर्गी प्रायः 12 से 15 अण्डे देकर उसको सेने तथा बच्चों को पालनें के लिये कुड़क हो जाती है। यह क्रम साल में 3 से 4 बार हो पाता है जिससे उत्पादन क्षमता 45 से 60 अण्डे हो पाती है। अतः यह आवश्यक है कि मुर्गी द्वारा दिये गये अण्डों को प्रतिदिन हटा दिया जाये। जब मुर्गी अण्डे नहीं देखेगी तो कुड़क होने की आदत कम हो जायेगी और उत्पादन में वृद्धि होगी। घर में चूजे निकालना देशी मुर्गियों में कम उत्पादन क्षमता का सबसे बड़ा कारण है। घर में निकाले गये चूजों में इन-ब्रीडिंग का दुष्प्रभाव भी होता है जिसके कारण अण्डे की संख्या , निषेचन तथा प्रस्फुटन में भारी कमी तथा चूजों की मृत्युदर में वृद्धि होती है। अतः यह आवश्यक है कि हर वर्ष नये संकर चूजे किसी अच्छी हैचरी से लिये जायें। अगर घर में चूजे

निकलवाना जरूरी हो तो पड़ोसी गाँव से मुर्गा बदलते रहना चाहिए और हर बार नये आदमी से मुर्गा बदलना चाहिए।

उन्नत देशी नस्लें

आधुनिक मुर्गी पालन के जनक भारतवर्ष में परम्परागत देशी मुर्गी का पालन आदिकाल से होता आ रहा है। जिसमें प्रायः अवर्णित दे शी मुर्गियों का उपयोग होता है जिनकी उत्पादन क्षमता तथा बढ़ोतरी दर उन्नत नस्ल की विदेशी मुर्गियों की अपेक्षा काफी कम है। दे शी नस्ल की मुर्गियों में उत्पादकता की कमी के अलावा अनेकों अन्य विशेषताये हैं जिनके कारण ये ग्रामीण क्षेत्रों के लिए विदे शी नस्लों की अपेक्षा उपयुक्त और लोकप्रिय हैं। यहाँ के वातावरण में सदियों से पलती रहने के कारण इसमें रोग प्रतिरोधक क्षमता ज्यादा है तथा आर्द्र-उष्मीय प्रकोप को सहने में सक्षम है। इसमें घूम-फिर कर अपना भोजन जुटाने की असीम क्षमता होती है , निम्नकोटि के आहार पर जीवन यापन कर सकती है , हल्के तथा फुर्तीले होने के कारण शिकारियों से अपनी रक्षा करने और वंषक्रम चलाने में सक्षम होती है। विगत चार द शकों में परम्परागत मुर्गीपालन की लोकप्रियता में काफी गिरावट आयी है जिनके कई कारणों में सबसे महत्वपूर्ण उच्च उत्पादकता वाले दे शी मुर्गी की प्रजातियों का अभाव है। ग्रामीण मुर्गीपालन के लिए विकसित नई किस्म की सभी प्रजातियाँ (वनराजा ,क्राइलर,कैरी देवेन्द्र, कृष्णा-जे, कृष्णा प्रिया, ग्राम प्रिया तथा कैरी गोल्ड इत्यादि) विदे शी नस्ल की दो रंगीन प्रजातियों/स्टेन/लाइन के संकरण से बनाया गया है जो ग्रामीण वातावरण के लिए उपयुक्त नहीं है। वैज्ञानिकों का यह सोचना गलत है कि गरीब और अनपढ़ किसान इस बात से वाकिफ नहीं हैं कि व्यवसायिक मांस और अण्डे की विकसित नस्लें दे शी मुर्गियों की अपेक्षा कई गुना ज्यादा उत्पादन क्षमता वाली होती हैं और अगर ग्रामीण परिवेश में भी उसके रख-रखाव और खान-पान पर पूरा ध्यान दिया जाये तो ग्रामीण मुर्गियों की अपेक्षा कई गुना उत्पादकता पा सकते हैं। लेकिन ग्रामीण पारिवारिक मुर्गीपालकों के लिए ऐसा कर पाना संभव नहीं है। उत्पादकता और आत्मरक्षा के बीच ऋणात्मक सह संबंध से ग्रामीण भली-भांति परिचित हैं। अधिक मांस और अण्डे की उत्पादकता के परोक्ष अवांछित दुष्प्रभाव जैसे मातृत्व गुण में कमी, शिकारी से आत्मरक्षा में शिथिलता तथा अपेक्षाकृत अधिक शरीर भार तथा छोटे टांग के कारण तेज भागकर अपने शिकारी से बचाव की क्षमता में कमी के कारण ये प्रजातियाँ किसानों को स्वीकार्य नहीं हैं। केवल रंगीन पंखों वाली विदे शी मूल की प्रजातियों के संकर दे शी मुर्गी के उचित विकल्प नहीं हो सकते हैं बल्कि इसके लिए ग्रामीण परिवेश के उपयुक्त गुणों वाले विशेष प्रकार की प्रजातियों के विकास की जरूरत है। ग्रामीण परिवेश के लिए उपयुक्त मुर्गियों के लिए आवश्यक कुछ गुणों का वर्णन है जो निम्नलिखित है-

1. **मुर्गी का रंगः** पक्षी का रंगीन होना आवश्यक है क्योंकि इस प्रकार के पक्षियों की लोकप्रियता के साथ रंगीन पंख शिकारियों से बचाव में सहायक होते हैं तथा इनमें रोग निरोधक क्षमता भी अधिक होती है।

2. **स्वरूप तथा स्वभावः** खुले क्षेत्रों में पलने के कारण इन मुर्गियों को शिकारियों (कुत्ते और बिल्ली) का डर हमे शा बना रहता है जिससे बचाव के लिए मुर्गी का कम वजनी, लम्बी टांगे, मजबूत पूर्ण विकसित पंख तथा खूंखार लड़ाकू स्वभाव का होना आवश्यक है।

3. **उत्पादकताः** मध्यम दर्जे की मांस और अण्डे उत्पादन की क्षमता वाली मुर्गी उपयुक्त है क्योंकि ग्रामीण वातावरण में खाने के प्राकृतिक स्रोतों का अभाव होता है जिसे जुटाने के लिए जी तोड़ परिश्रम की आवश्यकता होती है।

4. **रोगनिरोधक क्षमताः** चूँकि पक्षियों को खुले वातावरण में घूम-फिर कर अपना चारा जुटाना होता है तथा गंदी नालियों इत्यादि से कीड़े-मकोड़े खाने पड़ते हैं अतः इसमें रोगनिरोधक क्षमता का होना अति आवश्यक है।

5. **ग्रीष्म-उष्मीय सहिष्णुताः** ग्रीष्म-उष्मीय वातावरण के दुष्प्रभाव से बचने के लिए प्राकृतिक जन्य ग्रीष्म-उष्मीय प्रमुख जीन्स का उपयोग लाभप्रद होगा।

6. **स्वजननीय क्षमताः** पिछड़े इलाके में हर वर्ष विकसित नस्ल के चूजों की उपलब्धता सुनिश्चितत कराना कठिन कार्य है अतः यह आवश्यक है कि विकसित प्रजाति में स्वजननीय क्षमता हो।

उन्नत देशी नस्ल की प्रजातियाँ या देशी और विदेशी नस्ल की संकरवर्ण प्रजातियों में ही उपरोक्त सारे गुण संभव हो सकते हैं। अच्छे उत्पादन के लिये यह आवश्यक है कि कम उत्पादकता वाले देशी मुर्गी की जगह उन्नत देशी नस्लें पाली जायें। कैरी निर्भीक , कैरी शयामा, उपकारी और हितकारी नामक चार प्रकार की उन्नत नस्लें देशी मुर्गी की चार प्रजातियों का उपयोग करके बनाया गया है। चारों प्रजातियों में देशी मुर्गी के सारे गुणों के साथ-साथ वार्षिक अण्डा उत्पादन क्षमता 160 से 200 अण्डे, अण्डे का औसत वजन 52 से 60 ग्राम तथा अण्डे का रंग गहरे भूरे रंग का है।

संतुलित पूरक आहार

मुर्गियों की उन्नत नस्ल होने के कारण इसके आहार पर भी ध्यान देना होगा। मुर्गी आहार के प्राकृतिक स्रोत में दिनानुदिन कमी आ रही है अतः संतुलित आहार उपलब्ध कराना आज अति आवश्यक हो गया है। साधारणतः गाँवों में लोग वर्ष के खास मौसम में उपजने वाले एक ही अनाज को मुर्गियों को खाने के लिये देते हैं। एक प्रकार के अनाज से आहार संतुलित नहीं हो पाता। अतः आवश्यक है कि सालभर उपजने वाले तरह-तरह के अनाजों का मिश्रण मुर्गियों को खिलाया जाये। अगर सम्भव हो तो बाजार में बिकने वाला लवण मिश्रण भी मुर्गियों को दाने में साथ दिया जाये। यह आहार प्रति मुर्गी करीब 30-40 ग्राम की दर से शाम के समय दिया जाना चाहिये। आहार की मात्रा को मौसम और प्राकृतिक साधनों से उपलब्ध आहार की मात्रा के हिसाब से घटाया या बढ़ाया जा सकता है। केंचुए की खेती कर कुछ केचुए प्रतिदिन मुर्गियों को खिलाये जा सकते हैं जो प्रोटीन का एक बहुत अच्छा स्रोत हैं।

रोगों से बचाव

रोगों से बचाव के लिये यह आवश्यक है कि उचित समय पर विभिन्न रोगों के टीके लगवाये जायें। आजकल हर ब्लाक में टीके की सुविधा उपलब्ध है। टीकाकरण करवाने के लिये यह आवश्यक है कि मुर्गीपालक एक साथ बड़ी संख्या में चूजे निकलवायें या किसी अच्छे स्रोत से खरीदें। टीका एक दिन से एक सप्ताह की उम्र के चूजों को एक साथ दिया जा सकता है। अतः यह आवश्यक है कि मुर्गी को अण्डों पर तीन-चार गाँवों के मुर्गीपालक विचार कर एक सप्ताह के अन्दर ही बैठायें जिससे समूह में चूजे निकलने पर टीकाकरण आसान और सम्भव हो पायेगा। चूजे वर्ष में एक या दो बार ही निकाले जायें। मुर्गियों के रात्रि विश्राम तथा शत्रुओं से सुरक्षा के लिये बनाये गये दरबे साफ-सुथरे तथा हवादार हों। अगर सम्भव हो तो दरबे में तीन इंच मोटी धान की भूसी के विछावन की व्यवस्था करें जो दरबे की प्रतिदिन की सफाई से मुक्ति दिलायेगा। पीने के लिये चैबीसों घंटे स्वच्छ पानी की व्यवस्था करें।

उपरोक्त सुधारों के साथ देशी मुर्गीपालन से उत्पादन क्षमता में काफी बढ़ोत्तरी की जा सकती है और छोटे-छोटे मुर्गीपालक खुशहाल हो सकते हैं।